23
वर्ष : 2019-20
ISSN : 0976-5778

ईसुरी

बुन्देलखण्ड के आधुनिक साहित्यकारों पर केन्द्रित

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली द्वारा नामित शोध पत्रिका- संख्या : 48672

ईसुरी-23

(पूर्व समीक्षित शोध पत्रिका)

वर्ष - 2020 ISSN : 0976-5778

प्रधान संपादक

चन्दा बेन

संपादक

राजेन्द्र यादव

(सचिव बुन्देली पीठ)

प्रबंध संपादक

आशुतोष कुमार मिश्र

प्रकाशक

बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय,

सागर (म.प्र.)

ईसुरी-23

वर्ष – 2020 अंक – 23 ISSN : 0976-5778

संरक्षक
प्रो. आर.पी. तिवारी
कुलपति, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर (म.प्र.)

कर्नल राकेश मोहन जोशी
कुलसचिव, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर (म.प्र.)

संस्थापक संपादक
प्रो. कान्तिकुमार जैन

परामर्शदाता
प्रो. बी.आई. गुरू
प्रो. आनंदप्रकाश त्रिपाठी

प्रधान संपादक
प्रो. चन्दा बेन

संपादक
डॉ. राजेन्द्र यादव
(सचिव, बुन्देली पीठ)

प्रबंध संपादक
डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र

संपादक मण्डल
प्रो. आनंदप्रकाश त्रिपाठी
डॉ. हिमांशु कुमार
डॉ. अरविन्द कुमार
डॉ. अफरोज बेगम
डॉ. विवेकानन्द उपाध्याय
डॉ. मनीष कुमार
सत्यप्रकाश उपाध्याय
संतोष सोहगोरा
सतीष कुमार
विवेक विसारिया

आवरण छाया : उमेश यादव (सैकड़ों वर्ष प्राचीन कल्प वृक्ष, ओरछा म.प्र.)

प्रकाशक

बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

ईसुरी-23

वर्ष – 2020 अंक – 23 ISSN : 0976-5778

संरक्षक
प्रो. आर.पी. तिवारी
कुलपति, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर (म.प्र.)

कर्नल राकेश मोहन जोशी
कुलसचिव, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर (म.प्र.)

संस्थापक संपादक
प्रो. कान्तिकुमार जैन

परामर्शदाता
प्रो. बी.आई. गुरू
प्रो. आनंदप्रकाश त्रिपाठी

प्रधान संपादक
प्रो. चन्दा बेन

संपादक
डॉ. राजेन्द्र यादव
(सचिव, बुन्देली पीठ)

प्रबंध संपादक
डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र

संपादक मण्डल
प्रो. आनंदप्रकाश त्रिपाठी
डॉ. हिमांशु कुमार
डॉ. अरविन्द कुमार
डॉ. अफरोज बेगम
डॉ. विवेकानन्द उपाध्याय
डॉ. मनीष कुमार
सत्यप्रकाश उपाध्याय
संतोष सोहगोरा
सतीष कुमार
विवेक विसारिया

आवरण छाया : उमेश यादव (सैकड़ों वर्ष प्राचीन कल्प वृक्ष, ओरछा म.प्र.)

प्रकाशक

बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

अनुक्रम

प्रधान संपादक की कलम से... - प्रो. चन्दा बेन 3

संपादकीय - डॉ. राजेन्द्र यादव 5

बुन्देलखण्ड : कृति केन्द्रित मूल्यांकन

1. बुन्देली का सांस्कृतिक नाट्य उत्कर्ष (संदर्भ लोकनाथ सिलाकारी का राजा हरदौल बुन्देला) - प्रो. राजमति दिवाकर 9
2. बुन्देली का रामभक्ति काव्य (संदर्भ भगवानदीन मिश्र का राजेन्द्र विलास महाकाव्य) - प्रो. सुरेश आचार्य 12
3. बुन्देलखण्ड के रससिक्त अध्येता (संदर्भ हरिविष्णु अवस्थी का बुन्देलखण्ड की पारम्परिक जल संरचनाएं) - प्रो. चन्दा बेन 14
4. बुन्देलखण्ड की समृद्ध परंपरा : प्रबोध महाकाव्य (संदर्भ जगदीश कुमार कुशवाहा) - प्रो. सरोज गुप्ता 18
5. बुन्देली भाषा का रसात्मक महाकाव्य (संदर्भ मायूस सागरी का ब्रजरज) - प्रो. चन्दा बेन एवं सुधीर साहू 20
6. सद्यः सीरोत्कर्षण सुरभिः : बुन्देली के ललित निबंध (संदर्भ पद्मश्री कैलाश मड़बैया के निबन्ध) - डॉ. आशुतोष 24
7. बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्तिकोष (संदर्भ आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल) - डॉ. अफरोज बेगम 32
8. बुन्देली लोक का काव्यात्मक उछाह : ईसुरी (संदर्भ दया दीक्षित का फाग लोक के ईसुरी) - डॉ. सुजाता मिश्र 36
9. बुन्देली लोक संस्कृति का सृजनात्मक वैभव (संदर्भ मोतीलाल चौरसिया : बुन्देली लोकगीतों के सांस्कृतिक अध्ययन) - रतिराम अहिरवार 40

बुन्देलखण्ड : कृतिकार केन्द्रित मूल्यांकन

10. सागर जिले का साहित्यिक वैभव - वृन्दावन राय 'सरल' 45
11. अम्बिका प्रसाद दिव्य की काव्य-साधना - प्रो. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी 49
12. लोकजीवन के चितेरे कवि : अवधकिशोर जड़िया - प्रो. बहादुर सिंह परमार 59
13. जयन्ति ते सुकृतिनो - टीकाराम त्रिपाठी 66

अनुक्रम

प्रधान संपादक की कलम से... - प्रो. चन्दा बेन 3

संपादकीय - डॉ. राजेन्द्र यादव 5

बुन्देलखण्ड : कृति केन्द्रित मूल्यांकन

1. बुन्देली का सांस्कृतिक नाट्य उत्कर्ष (संदर्भ लोकनाथ सिलाकारी का राजा हरदौल बुन्देला) - प्रो. राजमति दिवाकर 9
2. बुन्देली का रामभक्ति काव्य (संदर्भ भगवानदीन मिश्र का राजेन्द्र विलास महाकाव्य) - प्रो. सुरेश आचार्य 12
3. बुन्देलखण्ड के रससिक्त अध्येता (संदर्भ हरिविष्णु अवस्थी का बुन्देलखण्ड की पारम्परिक जल संरचनाएं) - प्रो. चन्दा बेन 14
4. बुन्देलखण्ड की समृद्ध परंपरा : प्रबोध महाकाव्य (संदर्भ जगदीश कुमार कुशवाहा) - प्रो. सरोज गुप्ता 18
5. बुन्देली भाषा का रसात्मक महाकाव्य (संदर्भ मायूस सागरी का ब्रजरज) - प्रो. चन्दा बेन एवं सुधीर साहू 20
6. सद्यः सीरोत्कर्षण सुरभिः : बुन्देली के ललित निबंध (संदर्भ पद्मश्री कैलाश मड़बैया के निबन्ध) - डॉ. आशुतोष 24
7. बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्तिकोष (संदर्भ आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल) - डॉ. अफरोज बेगम 32
8. बुन्देली लोक का काव्यात्मक उछाह : ईसुरी (संदर्भ दया दीक्षित का फाग लोक के ईसुरी) - डॉ. सुजाता मिश्र 36
9. बुन्देली लोक संस्कृति का सृजनात्मक वैभव (संदर्भ मोतीलाल चौरसिया : बुन्देली लोकगीतों के सांस्कृतिक अध्ययन) - रतिराम अहिरवार 40

बुन्देलखण्ड : कृतिकार केन्द्रित मूल्यांकन

10. सागर जिले का साहित्यिक वैभव - वृन्दावन राय 'सरल' 45
11. अम्बिका प्रसाद दिव्य की काव्य-साधना - प्रो. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी 49
12. लोकजीवन के चितेरे कवि : अवधकिशोर जड़िया - प्रो. बहादुर सिंह परमार 59
13. जयन्ति ते सुकृतिनो - टीकाराम त्रिपाठी 66

बुन्देली लोक का काव्यात्मक उछाह : ईसुरी

(संदर्भ दया दीक्षित का फाग लोक के ईसुरी)

डॉ. सुजाता मिश्र*

जब हम लोक साहित्य की बात करते हैं तो उसके भीतर आम जन-जीवन का चित्रण स्वतः समाहित रहता है। लोक साहित्य की विशेषता ही यह है कि इसमें निजी अनुभूतियों की जगह लोक मानस से जुडे प्रसंग और लोकमानस की भावनाओं का ही मुख्य स्थान रहता है, कवि या रचना कार यहाँ अपने अनुभवों को प्रयोग तो करता है किंतु उनका आधार भी लोक मानस की रुचि आवश्यकतायें और मनोरंजन होता है। साधारण जनता से संबंधित साहित्य को लोकसाहित्य कहना चाहिए। साधारण जनजीवन विशिष्ट जीवन से भिन्न होता है अतः जनसाहित्य (लोकसाहित्य) का आदर्श विशिष्ट साहित्य से पृथक् होता है। किसी देश अथवा क्षेत्र का लोकसाहित्य वहाँ की आदिकाल से लेकर अब तक की उन सभी प्रवृत्तियों का प्रतीक होता है जो साधारण जनस्वभाव के अंतर्गत आती हैं। इस साहित्य में जनजीवन की सभी प्रकार की भावनाएँ बिना किसी कृत्रिमता के समाई रहती हैं। लोक-साहित्य में लोक-मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गाती-गुनगुनाती है। लोक-साहित्य में निहित सौंदर्य का मूल्यांकन सर्वथा अनुभूतिजन्य है आदिकाल से श्रुति एवं स्मृति के सहारे जीवित रहनेवाले लोकसाहित्य के कुछ विशेष सिद्धांत हैं। इस साहित्य में मुख्य रूप से वे रचनाएँ ही स्वीकार की जाती हैं अथवा जीवन पाती हैं जो अनेक कंठों से अनेक रूपों में बन बिगड़कर एक सर्वमान्य रूप धारण कर लेती हैं। यह रचनाक्रम आदिकाल से अबतक जारी है। ऐसी बहुत सी साहित्यक सामग्री आज भी प्रचलित है जो अभी एकरूपता नहीं ग्रहण कर पाई हैं। परंपरागत एवं सामूहिक प्रतिभाओं से निर्मित होने के कारण विद्वानों ने लोकसाहित्य को ''अपौरुषेय'' की संज्ञा दी है। निश्चय ही परंपरागत लोकसाहित्य किसी एक व्यक्ति की रचना का परिणाम नहीं है। वैसे तो इसके कई प्रमाण दिए जा सकते हैं कि एक ही गीत, कथा या कहावत एक स्थल पर जिस रूप में होता है दूसरे स्थल पर पहुँचते-पहुँचते उसका वह रूप बदल जाता है किंतु एक अच्छा प्रमाण यह होगा कि सैकड़ों वर्ष से गाए जानेवाले लोकमहाकाव्य आल्ह-खंड को आज तक एकरूपता नहीं प्राप्त हो सकी। इस कार्य में लोकप्रवृत्ति किसी प्रतिबंध को स्वीकार ही नहीं करती। स्फुट गीतों में तो केवल पंक्तियाँ ही इधर उधर होती हैं किंतु प्रबंध गीतों (गाथाओं) एवं कथाओं में घटनाएँ भी बदलती रहती हैं। यह सब होते हुए भी उन प्रबंधों एवं कथाओं के परिणामों में प्रायः कोई परिवर्तन नहीं स्वीकार किया जाता। परिणाम एवं लोकप्रचलित सत्य तथा तथ्य को आधार मानकर घटनाचक्र मनमाने ढंग से चलाए जाते हैं। रामकथा का ही उदाहरण लिया जाये तो वाल्मिकी रामायण और तुलसीदासकृत रामचरित मानस की

*हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 470003 मोबाइल : 9425821780

कथाओं के अनेक प्रसंगों में परस्पर अंतर और टकराव दिखता है, साथ ही भारत की वैविध्यपूर्ण लोक संस्कृति में तो हर गांव, हर कस्बे से गुजरते हुए रामकथा में नये प्रसंग जुडते चले जाते हैं, ये प्रसंग जन श्रुतियों के रूप में इतने गहरे बैठे होते हैं कि एक स्थापित सत्य और परम्परा का रूप ले लेते हैं। ऐसी ही जन श्रुतियां कभी लोकगीत, कभी लोककथा तो कभी लोकपर्व के रूप में सामनें आती हैं, जिन्हें उस क्षेत्र विशेष और लोक संस्कृति विशेष में रचे-बसे लोग ही मूल रूप में समझ सकते हैं, अन्य कोई नहीं।

भारत विविधवर्णी लोक संस्कृति से संपन्न, समृद्ध परम्पराओं का देश है, इन परम्पराओं में से एक लोकगीतों की है।यदि हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो हम आदिकालीन साहित्य से होते हुए भक्तिकाल और रीतिकाल तक के साहित्य सृजन पर लोक जीवन गहरी छाप देख सकतें हैं। चाहे वो समाज सुधारक रचनायें हो या प्रकृति चित्रण, ऋतु वर्णन हो, या श्रृंगारपरक रचनायें अथवा धर्म - संस्कृति विषयक काव्य ही क्यों ना हो, सभी के मूलाधार के रूप में हम लोक संस्कृति को ही पातें हैं। अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि लोक साहित्य में लोक चित्रण ही प्रधान होता है, निजी अनुभूतियां नहीं। यानि लोक साहित्य में लोक जीवन के उस वर्ग का चित्रण रहता है जो अपनी प्राचीन मान्यताओं, विश्वासों और परंपराओं के प्रति आस्थावान है। लोक साहित्य मूलतः लोक की मौखिक अभिव्यक्ति है जो संपूर्ण जीवन का नेतृत्व करती है। लोक जीवन की अभिव्यक्ति को वाणी देना ही लोक साहित्य है।

इत यमुना, उत नर्मदा, इत चंबल, उत टोंस की संस्कृति में रचा - बसा बुंदेलखंड भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा सभ्यता का एक महत्वपूर्ण केंद्र है। इस बुंदेलखंड का अपना एक विशिष्ट लोक साहित्य है जिसे फाग साहित्य कहा जाता है। पर्वराज होली से ही बुंदेलखंड में फागों की बयार बहने लगती है। फाग का उत्स मूलतः श्रृंगार है तथा बुंदेलखंड में श्रृंगारी कवियों की बड़ी लंबी परंपरा रही है, पद्माकर, खुमान कवि, ठाकुर, दामोदर देव, नवलसिंह कायस्थ, प्रताप साहि, पजनेश, गदाधर भट्ट, सरदार कवि, भगवंत कवि, गंगाधर व्यास तथा खयालीराम जैसे बुंदेलखंड के श्रृंगारी कवियों ने प्रभूत काव्य रचा। इसी काव्य का एक अंग फाग है। ईसुरी की प्रसिद्धि उनकी फागों के कारण है। फाग परंपरागत लोक संगीत है, जो बुंदेलखंड में प्रचलित रहा है। फाग शब्द की उत्पत्ति फाल्गुन से हुई है। इस माह में जो गीत लोक स्वर में निबद्ध किए जाकर गाए गए, वे फाग कहलाए। फागों के साथ बुंदेलखंड का प्रसिद्ध राई नृत्य पर किया जाता है। बुंदेलखंड में साखी की फाग, झूला की फाग, बुझौवल फाग (प्रश्नोत्तरी फाग), छंदयाऊ फाग, जैसे अनेक फाग प्रचलित रही हैं। बुंदेली फागों के एकछत्र सम्राट हैं लोककवि ईसुरी। ईसुरी ने फागों की एक विशिष्ट शैली 'चौकड़िया फाग' को जन्म दिया, और अपनी नैसर्गिक प्रतिभा से ग्रामीण जीवन के मनिभावों को सुर-ताल के साथ समन्वित कर उपेक्षित और अनचीन्हीं लोक भावनाओं को इन फागों में के माध्यम से सजीव कर दिया। अपने समय से लेकर आज तक ईसुरी बुंदेली समाज में उतने ही लोकप्रिय रहे हैं, उनकी रचनाओं को जहां एक ओर आमजन और सुधिजनों द्वारा सराहा - अपनाया गया वहीं दूसरी ओर समाज के आलोचक वर्ग ने भी समय-समय पर उनकी रचनाओं पर अपने विचार व्यक्त किये। इस क्रम में किसी ने उनके फागों को आध्यात्मिक कहा, तो किसी ने उनमें शुद्ध श्रृंगारिक तत्व पाये, वहीं कुछ लोग ऐसे भी रहे जिन्होनें ईसुरी के फागों को में व्यक्त "रजऊ" को ईसुरी की प्रेमिका कहकर उनके पदों को अश्लील और अनैतिक तक घोषित कर दिया। ऐसे में यह सवाल भी उठता है कि लोककवि की कविता में लोकतत्व देखा जायें या उसकी निजी अनुभूतियां? निश्चित तौर पर लोक साहित्य तो वही हुआ जिसमें लोक की अभिव्यक्ति हो। जिसमें लोक की भावनायें समाहित हों, जिसमें लोक परम्पराओं का चित्रण हो, लोक जीवन का चित्रण हो और जो लोक द्वारा मान्य, स्वीकृत और आत्मसात किया

गया हो। वर्तमान में ईसुरी के जीवन को नजदीक से समझने के लिये डीएवी कॉलेज कानपुर में बतौर शिक्षक कार्यरत डॉ. दया दीक्षित का उपन्यास ''फाग लोक के ईसुरी'' एक महत्वपूर्ण दस्तावेज साबित हो सकता है, जो ईसुरी के जीवन और काव्य के सम्बंध में स्थापित अनेक मिथक तोडता है और साथ ही ईसुरी जीवन को बेहद नजदीक से समझने का अवसर देता है। जिस समाज, संस्कृति के बीच ईसुरी का जन्म हुआ, जिसमें उनका जीवन बीता दरअसल उसी समाज और संस्कृति की झलक हम ईसुरी के काव्य में पाते हैं। उनका काव्य कहीं भी अपने समाज से कटा नहीं है, शायद यही वजह है कि बुंदेलखंड के फाग साहित्य में आज भी ईसुरी की फागे उसी महक के साथ जिंदा है। डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र अपने लेख '' बुंदेली जाति का पुरुषार्थ - ईसुरी'' में लिखते हैं ''ईसुरी लोक के कवि हैं। लोक की ही तरह फक्कड, बौडम,उदात्त, कठोर, कोमल, रसवत, अनगढ, बेफिक्रे, मस्तमौला, चंचल आदि। बुंदेली साहित्य में ईसुरी का वही स्थान है जो हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के निर्माण और विकास में भारतेंदु हरिशचंद्र का है।'' वे आगे कहते हैं ''ईसुरी के मूल्यांकन के लिये हमारा प्रस्थान बिंदु ही गलत होगा तो हम बडी आसानी से ईसुरी को दोयम दर्जे का सिद्ध करने के निष्कर्षों तक पहुंच सकते हैं। हां ईसुरी ने प्रेम और श्रृंगार की सर्वोत्तम फागों की रचना की है लेकिन वह उनकी कविता का एक हिस्सा भर है। बुंदेली जाति में ईसुरी की इतनी सहज स्वीकारोक्ति उनके सम्पूर्ण साहित्य को लेकर है, न कि उनकी श्रृंगारी फागों के कारण।

अपने लेख ''लगी हाठ उठ जानै - ईसुरी का अध्यात्म'' में डॉ. लक्ष्मी पांडे कहती हैं ''बुंदेलखंड के जनकवि ईसुरी के व्यक्तित्व और कृतित्व में स्थापित मान्यताओं के अतिरिक्त अन्य पक्ष भी थे जिनपर चर्चा कम हुई।'' वे आगे लिखती हैं ''जब ईसुरी अकुंठ सौंदर्य और श्रृंगार की मांसल चित्रात्मक अभिव्यक्ति का अतिरेक करते हैं तो छायावाद के बाद वाला स्मरण हो आता है। इस क्रम में हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि किसी भी कवि की लोकप्रियता के आधार निर्माण में महज उसके काव्य विषय नहीं बल्कि काव्य शैली और काव्य भाषा की भी अहम भूमिका होती है। अतः महज चंद श्रृंगारिक पदों के आधार पर ईसुरी के काव्य पर विचार नहीं किया जा सकता।

बुंदेलखंड के ही सुप्रसिद्ध लेखक डॉ. श्यामसुंदर दुबे का मानना है कि ईसुरी ठेठ के ठाठ से सजे-सँवरे अपनी निश्छल अभिव्यक्ति में अद्वितीय हो जाते हैं। उनका यह कहना सटीक है। ईसुरी ने रजऊ को लेकर जिन देशज शब्दों और प्रतीकों के माध्यम से अपने आपको अभिव्यक्त किया है, वह वास्तव में अपूर्व है। अस्थियों में घुन लगना एक बुंदेली मुहावरा है, लेकिन ईसुरी ने इसे रजऊ के प्रेमचिंतन से जोड़ दिया। एक फाग में उन्होंने कहा -

हड़रा घुन हो गए हमारे, सोच में रजऊ तुम्हारे।
दौरी देह दूबरी हो गई, करकें देख उगारे।

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय के अनुसार ''ईसुरी ने केवल रजऊ के प्रेम तक ही अपने आपको सीमित नहीं रखा बल्कि उन्होंने राधा-कृष्ण से लेकर अपने लोक सौंदर्य और देशभक्तों के शौर्य को भी अपनी फागों में जहाँ एक ओर गाया वहीं दूसरी ओर उन्होंने इस संसार की निस्सारता पर भी कबीराना ठाठ के साथ फागें कहीं। नीम के पेड़ की छाया का सुंदर वर्णन करते हुए वे कहते हैं -

सीतल एई नीम की छइयाँ, घामौं व्यापत नइयाँ।
धरती नौं जे छू-छू जावै, है लालौई डरइयाँ।

अर्थात् नीम की छाया बहुत शीतल है। यहाँ धूप नहीं लगती और इसकी हरी-भरी डालियाँ धरती को छू-छू लेती हैं। ईसुरी वृक्षों के रक्षक हैं। उनकी फागों में पर्यावरण के प्रति चिंता भी है। एक फाग में वे वृक्षों पर कुल्हाड़ी चलाने वालों को कहते हैं कि उन पर क्यों कुल्हाड़ी चलाते हो, वे तो मनुष्यों के पालनकर्ता हैं। उनमें इतनी सामर्थ्य है कि वे काल को भी काट देते हैं। उन्हें भूख से रक्षा के लिए भगवान् ने उपजाया है और वे ऐसे हैं कि मृतप्राय लोगों को तरोताजा कर देते हैं -

इनपे लगे कुलरिया घालन,

महुआ मानस पालन!

ईसुरी के इन तमाम काव्य पदों से गुजरने के बाद लगता है कि वे एक मौलिक कवि थे।मानव जीवन का कोई पक्ष उनके काव्य से अछूता नहीं रहा। कहना सही होगा कि बुंदेलखंड के महानतम लोककवि ईसुरी के काव्य में लोकजीवन के सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक पक्ष पूरी जीवन्तता और रचनात्मकता के साथ उद्‌घाटित हुए हैं। ईसुरी का वैशिष्ट्य यह है कि वे तथाकथित संभ्रांतता या पांडित्य से कथ्य,भाषा, शैली आदि उधार नहीं लेते, बल्कि वे देशज ग्रामीण लोक मूल्यों और परम्पराओं को इतनी स्वाभाविकता, प्रगाढ़ता और अपनत्व से अंकित करते हैं कि उसके सम्मुख शिष्टता-शालीनता ओढी हुई सृजनधारा विपन्न प्रतीत होने लगती है। यह ईसुरी की भाषिक सहजता, सरलता ही है कि उनका साहित्य पुस्तकाकार रूप में उपलब्ध ना होने के बावजूद श्रुति परंपरा में रच - बसकर, पीढी दर पीढी सुन-गाकर आज तक तक जीवित है। ईसुरी ने बुंदेली भाषा का इतना सरल और स्वाभिवक प्रयोग किया है कि सुनने वाले को कोई शब्द खटकता नहीं अपितु ईसुरी का शब्द संयोजन श्रोताओं की स्मृति में समा जाता है। हालांकि बुंदेलखंड की माटी में केशव और पद्‌माकर जैसे रससिद्ध कवि हुए हैं किंतु अपनी मातृ भाषा बुंदेली में काव्य सृजन करने वाले ईसुरी ही बुंदेली फग के सच्चे सपूत कहे माने जाते हैं। यह भी विडम्बना है कि अपने राधा - कृष्ण सम्बन्धी अपने श्रृंगारिक गीतों के लिये विद्यापति ''मैथिल कोकिल'' कहलाते हैं तो सुजान की याद में काव्य सृजन करने वाले घनानंद ''प्रेम की पीर के कवि'' कहलायें जाते हैं, किंतु अपने मनोंभावों की अभिव्यक्ति के लिये ''रजऊ'' का सृजन करने से ही ईसुरी के समस्त काव्य को खारिज नहीं किया जा सकता।

ईसुरी के काव्य को उसी व्यापक दृष्टिकोण से देखने, समझनें और परखनें की आवश्यकता है जिस व्यापकता में उन्होनें काव्य सृजन किया है, जिस व्यापक दृष्टि कोण से उन्होनें बुंदेलखंड को अपने काव्य में उतारा है। किसी भी संकुचित नजरिये से ईसुरी को देखना, किसी भी पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर ईसुरी को परखना एक लोककवि के साथ अन्याय होगा।

सन्दर्भ -

1. फाग लोक के ईसुरी - डॉ. दया दीक्षित
2. बुंदेली समाज और संस्कृति - प्रो. बलभद्र तिवारी
3. ईसुरी - अंक 19 - सम्पादक प्रो. आनंद प्रकाश त्रिपाठी
4. लगी हठ उठ जानै - ईसुरी का अध्यात्म - डॉ. लक्ष्मी पांडेय
5. अलौकिक कवि ईसुरी - नर्मदा प्रसाद उपाध्याय- साहित्य अमृत - अप्रैल 2020
6. बुंदेली छंद परंपरा और चौकड़िया फाग - डॉ. साधना वर्मा
7. लेखः बुन्देली लोकरंग की साक्षी ईसुरी की फागें - संजीव - ब्लॉग -दिव्य नर्मदा
8. ईसुरी का फाग साहित्य - डॉ. लोकेंद्र सिंह नागर - भारतवाणी डॉट इन - (एम एच आर डी)